**ओ३म्**

**‘संस्कृत भाषा का महत्व व इसके प्रचार पर विचार’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

संस्कृत भाषा संसार की प्राचीनतम एवं प्रथम भाषा है। इस भाषा में ही सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर ने वेदों का ज्ञान दिया था। हमने एक लेख में यह विचार किया था कि क्या ईश्वर के अपने निज प्रयोग की भी क्या कोई भाषा है? इसके समाधान में हमारा निष्कर्ष यह था कि ईश्वर भी अपने कार्यों को सम्पादित करने में किसी न किसी भाषा का प्रयोग करता है और वह भाषा वेदों की भाषा **“वैदिक-अलौकिक संस्कृत”** ही हो सकती है जिसका दिग्दर्शन वेदों के अध्ययन करने पर होता है। वेदों की भाषा ईश्वर की अपनी भाषा है जिसमें उसने मनुष्य आदि की तिब्बत में सृष्टि कर उन्हें चार वेद, ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद का ज्ञान स्व-निर्दिष्ट नाम वाले अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को दिया था। महर्षि दयानन्द ने इस प्रश्न कि चार ऋषियों को वेदों का ज्ञान अर्थात् इनकी भाषा व शब्द-अर्थ-सम्बन्ध आदि का ज्ञान उन ऋषियों को किसने कराया? इसका तर्क व प्रमाण युक्त उत्तर महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में यह कह कर दिया है कि ईश्वर ने ही उन चारों ऋषियों को वेदों मे मन्त्रों के अर्थ जनाये। माता-पिता सन्तान को जन्म देते हैं। जन्म के समय बच्चे का शरीर व इसकी इन्द्रियां भाषा समझने, सीखने व बोलने में समर्थ नहीं होतीं। इनकी स्थिति के अनुसार माता-पिता बच्चे को गोद में लेकर उन्हीं के स्तर के अनुसार अपनी भाषा के शब्द व लोरियां आदि बोलकर धीरे-धीरे ज्ञान कराते हैं। कुछ ही दिनों में वह अपने माता-पिता की आवाज व उनके शब्दों को समझने लगता है व उन पर अपनी सकारात्मक प्रतिक्रिया अपने व्यवहार व हाव-भाव से देता है। यह क्रम चलता है और बच्चा अपनी माता की भाषा को समझने लगता है और जब उसकी वाक् इन्द्रिय 6 माह व उसके बाद कुछ बोलने के योग्य हो जाती है तो वह शब्दोच्चार भी आरम्भ कर देता है। समय के साथ उसकी भाषा में सुधार होता रहता है। 3 से 5 या 7 वर्ष की वय में उसकी यह स्थिति हो जाती है कि अब उसे किसी भी भाषा का ज्ञान यदि कराया जाये तो वह धीरे-धीरे सीख जाता है, वह चाहे हिन्दी हो, अंग्रेजी हो, संस्कृत हो या फिर संसार व किसी देश की अन्य कोई सी भी भाषा।

**मनमोहन कुमार आर्य**

संस्कृत ऐतिहासिकता की दृष्टि से संसार की सभी भाषाओं की जननी है। इस प्रकार से वेदों की संस्कृत संसार के सब मनुष्यों के सभी प्राचीन ऋषियों व पूर्वजों की मातृ भाषा थी और ईश्वर ही प्रथम पीढ़ी व बाद के सभी मनुष्यों को भाषा व वेदों का ज्ञान देने वाली माता सिद्ध होती है। संस्कृत का महत्व इस कारण भी है कि इसके ज्ञान से सृष्टि के आरम्भ में, जो कि लगभग 2 अरब वर्ष पूर्व अस्तित्व में आई, उस समय व उसके बाद के संसार के लोगों के आचार-विचार, धर्म व संस्कृति पर प्रकाश पड़ता है। यद्यपि वेदों में इतिहास न होकर शुद्ध ज्ञान व विज्ञान का ही भण्डार है जिसे हमारे वेदज्ञानी ऋषि ज्ञान-कर्म-उपासना में वर्गीकृत करते हैं। इस स्थिति में भी यह तो ज्ञात होता ही है कि महाभारत काल से पूर्व घटने वाली ऐतिहासकि घटनायें वैदिक विचारधारा और विपरीत विचारों के लोगों का द्वन्द हुआ करता रहा होगा। संसार में सदा से ही अच्छाई व बुराई दो प्रकार की विचारधारायें रही हैं। दोनों में समय-समय पर संघर्ष होता आया है और अन्तोगत्वा सत्य की विजय तथा असत्य की पराजय होती आई है। रामायण व महाभारत का अध्ययन कर यही अनुभव हमें होता है। आज भी यदि हम अपने धर्म व कर्तव्यों के क्षेत्र में सत्य की खोज करें और सत्य को ग्रहण करें व असत्य का त्याग कर दें तो इससे मानव जाति का अनन्य उपकार व कल्याण हो सकता है। यदि सत्य के प्रति उपेक्षा का भाव रखेंगे, जैसा कि आजकल दिखाई देता है, तो इससे सभी का कल्याण नहीं हो सकता है। आजकल सत्य का सर्वत्र व्यवहार न होने के कारण अशान्ति व दुःख का वातावरण विद्यमान है। इस समस्या का हल केवल व केवल वेदों का सत्य ज्ञान प्राप्त कर उसके अनुसार समाज की संरचना का गुण-कर्म व स्वभाव के अनुसार सुधार करना ही है। कोई अन्य मार्ग मानवजाति के कल्याण नहीं है। यही कार्य महर्षि दयानन्द ने अपने समय में मनसा-वाचा-कर्मणा किया था। इस कारण से संस्कृत का संरक्षण, संवर्धन, प्रचार और प्रसार अति आवश्यक है। यह संसार के प्रत्येक मनुष्य का नैतिक व मुख्य कर्तव्य भी है।

आज संसार में अनेकानेक भाषायें हैं। संसार के लोग अपनी-अपनी पसन्द की भाषा का प्रयोग करते हैं। इससे उन्हें अपनी बात दूसरों को बताने व समझाने में आसानी होती है व दूसरों की बातें समझने में भी लाभ होता है। यदि दो भिन्न-भिन्न भाषा वाले व्यक्ति परस्पर बात करना चाहें और अपनी-अपनी भाषा बोलें तो दोनों को ही एक-दूसरे को समझना सम्भव नहीं होता। दोनों में से एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति की भाषा आनी चाहिये तभी, उस एक दूसरे को समझ में आने वाली भाषा का प्रयोग करने पर, परस्पर व्यवहार किया जा सकता है। अब यदि एक यूनिवर्सल वा वैश्विक सम्पर्क भाषा की बात करें और सबको स्वीकार करने को कहा जाये तो सब अपनी ही भाषा को वैश्विक भाषा बनाना चाहेंगे और इससे सबको स्वीकार्य हल सम्भव नहीं होगा। एक स्थिति ऐसी बनती है कि हम एक भाषा पर सबको सहमत करा सकते हैं और वह भाषा है संस्कृत। इस भाषा के पक्ष में सबसे प्रबल तर्क यह है कि यह संसार की सबसे प्रथम व प्राचीनतम भाषा होने के कारण हम सब के पूर्वजों की भाषा रही है। पूर्वजों की धरोहर की रक्षा व उसका संवर्धन व प्रचार-प्रसार उनकी सन्ततियों व भावी पीढ़ीयों का मुख्य कर्तव्य होता है। यदि वह ऐसा न करें तो वह उनकी योग्य उत्तराधिकारी न कहलाकर प्रमादी व कुलघाती कहलाती हैं। इस तर्क को लागू करने पर जो भी व्यक्ति संस्कृत भाषा का विरोध करेगा तो वह अपने पूर्वजों से द्रोह करने वाला ही सिद्ध होगा। ऐसा शायद कोई भी शिक्षित व समझदार व्यक्ति स्वयं के लिए कहलाना नहीं चाहेगा। अतः संसार में सभी लोगों की कोई एक सम्पर्क भाषा यदि हो सकती है तो वह योग्यता भी आज केवल संस्कृत भाषा में ही है। अतः आवश्यकता है कि संस्कृत का उन्ननय संस्कृत प्रेमियों को इसका प्रयोग, प्रचार-प्रसार, पठन-पाठन, पुस्तक लेखन आदि करके करना चाहिये। हम तो यह भी अनुभव करते हैं कि संसार के प्रत्येक व्यक्ति को अपनी मातृ भाषा के अतिरिक्त दूसरी भाषा के रूप में संस्कृत सीखनी चाहिये और इसे सीख कर स्वयं संस्कृत शिक्षक बनकर इसका प्रचारक व प्रसारक बन कर अपने पूर्वजों के मार्ग का अनुगमन कर उनका सच्चा अधिकारी स्वयं को सिद्ध करना चाहिये।

हमारे देश में रामराज्य की बात कही जाती है। रामराज्य क्या हैं? ऐसा राज्य कि जहां सबको उन्नति के समान अवसर प्रदान हों, किसी के साथ पक्षपात व शोषण न हो, कोई अभाव ग्रस्त न हो, कोई अस्वस्थ व अल्पायु न हो, कोई अज्ञानी, कंजूस, सेवाभाव विहीन न हो। सभी ज्ञानी, वेदानुगामी, सत्यानुगामी, न्यायपूर्ण व्यवहार करने वाले, स्त्री-शूद्र-निर्धन-रोगी-अशिक्षित आदि को अपना सहोदर भाई के समान प्रेम करने वालें हो। सभी अपने मिथ्याविश्वासों को दूर कर एक सत्य धर्म व संस्कृति के अनुयायी हों, सब देशों के निवासी अपने व दूसरे देश वालों को अपने मित्र व भाई की दृष्टि से देखें व सुख-दुःख में मिलकर सहयोग करने वाले हों। इस लक्ष्य की प्राप्ति में भी संस्कृत सहयोग कर सकती है। संसार में महाभारत काल तक के 2 अरब वर्षों में सारे संसार के लोगों का केवल एक मत व धर्म था जो कि वेदों पर आधारित एवं प्रचलित था। संस्कृत का जब सभी अध्ययन करेंगे तो इससे संस्कृत भाषा एवं इसके वेदादि साहित्य के अनुरूप सभी के हृदय के भावों की एकता स्थापित होगी और अज्ञान व मिथ्याविश्वास अनायास समाप्त हो सकते हैं। इस प्रकार के रामराज्य का लक्ष्य भी संस्कृत के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

संस्कृत के प्रचार प्रसार का कार्य संस्कृत के जानकारों व संस्कृत से प्रेम करने वालों को करना है। समय-समय पर देश-देशान्तर में विश्व संस्कृत सम्मेलन आदि आयोजित होते रहते हैं परन्तु ऐसा लगता है कि संस्कृत के प्रचार-प्रसार व क्रियान्वयन में कहीं न कहीं त्रुटियां व न्यूनतायें हैं। इन्हें दूर कर समर्पण भाव से कार्य करने से सफलता मिलेगी। आईयें, संस्कृत अध्ययन का व्रत लें। अध्ययन पूरा कर संस्कृत के प्रचार-प्रसार में सर्वात्मा प्रचार-प्रसार कर ईश्वर प्रदात्त भाषा को उसका उचित स्थान दिलाने में अपने कर्तव्य का निर्धारण कर उसका पालन करें और इस परोपकारी कार्य के लिए ईश्वर के कृपापात्र बनें। आर्यसमाज द्वारा देश भर में चलाये जा रहे गुरूकुल इस कार्य की सफलता में विशेष सहयोगी हो सकते हैं।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**